अनुशासित युवा शक्ति

Abushasit Yuva Shakti

प्रासाद की चिरस्थिरता और उसकी दृढ़ता जिस प्रकार आधारशिला की मजबूती पर आधारित है, लघु पादपों का विशाल वृक्षत्व जिस प्रकार बाल्यवस्था के सिंचन और संरक्षण पर आश्रित होता है, उसी प्रकार युवक की सुख-शांति में समृद्विशालिता का संसार छात्रावस्ता पर आधारित होता है। यह अवस्था नवीन वृक्ष की मृदु और कोमल शाखा हैं, जिसे अपनी मनचाही अवस्था में सरलता से मोड़ा जा सकता है और एक बार जिधर आप मोड़ देगें, जीवन भर उधर ही रहेगीं। अवस्था प्राप्त विशाल वृक्षों की शाखाएँ टूट भले ही जाएँ पर मुड़ती नहीं है क्योंकि समय अनुभव और जीवन के सुख-दुख उन्हें कठोर बना देते है। अतः मानव जीवन की इस प्रारम्भिक अवस्था को सच्चरित्रता और सदाचारिता आदि उपायों से सुरक्षित रखना प्रत्येक मनुष्य का परम कर्तवय है।

युवाशक्ति अबोधाअवस्था होती है इसमें न बुद्धि परिष्कृत होती है और न विचार। माता-पिता तथा गुरूजनों के दबाव से वह बालक कर्तव्य करना सीखता है। माता-पिता तथा गुरूजनों की आज्ञाएँ ज्यों कि त्यों स्वीकार करना ही अनुशासन कहा जाता है 'अनुशासन' का शाब्दिक अर्थ शासन के पीछे चलना है अर्थात गुरूजनांे और अपने पथ-प्रदर्शकों के नियंत्रण में रहकर नियमबद्व जीवन-यापन करना तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करना अनुशासन कहा जा सकता है। अनुशासनहीन विघार्थी न तो देश का सभ्य नागरिक बन सकता है और न अपने व्यक्तिगत जीवन मंे सफल हो सकता है। वैसे तो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अनुशासन परम आवश्यक है, परन्तु विद्यार्थी जीवन के लिए यह सफलता के लिए एकमात्र कुंजी है।

आज की युवाशक्ति में अनुशासन का अभाव देखने में आता है। आज का विद्यार्थी घर में माता-पिता की आज्ञा नहीं मानता, उनके सदुपदेशों का आदर नहीं करता, उनके बताए गए मार्ग पर नहीं चलता। अनुशासनहीनता का मुख्य कारण माता-पिता की ढिलाई है। माता-पिता के संस्कार ही बच्चों पर पड़ते हैं। बच्चे की प्राथमिक पाठशाला घर पर होती है। वह पहले घर में ही शिक्षा लेता है, उसके बाद वह स्कूल और काॅलेज में

जाता है, उसके संस्कार घर में ही खराब हो जाते हैं। पहले तो प्यार के कारण माता-पिता कुछ करते नहीं, पर जब हाथी के दाँत बाहर निकल जाते हैं, तब उन्हें चिंता होती है, फिर वे अध्यापक और कॉलेजों की आलोचना करना आरम्भ कर देते हैं। दूसरा कारण आज भी अपनी शिक्षा-प्रणाली है। इसमें नैतिक और चारित्रिक शिक्षा को कोई स्थान नहीं दिया गया है। पहले विधार्थियों को दंड का भय रहता था, क्योंकि ''भय बिन होय न प्रीति'', पर अब आप विधार्थियों के हाथ नहीं लगा सकते, क्योंकि शारीरिक दण्ड अवैध है। केवल जबानी जमाखर्च कर सकते हैं। इसमें विधार्थी बहुत तेज होता है, आप एक कहेंगे वह आपको चार सुनायेगा।

शिक्षा-संस्थानों का कुप्रबन्ध भी छात्रों को अनुशासनहीन बनाता है। परिणामस्वरूप कभी वे विद्यालय के अधिकारियों की आज्ञाओं का उल्लंघन करते हैं और कभी अध्यापकों की अवज्ञा। अधिकाशं कक्षा-भवन छोटे होते हैं और छात्रों की संख्या सीमा से भी अधिक की होती है। कॉलेेजों में तो एक-एक कक्षा में सौ-सौ विद्यार्थी होते हैं। ऐसी दशा में न अध्ययन होता है और न अध्यापन। कभी-कभी राजनैतिक तत्व विधार्थियों को भड़काकर कॉलेजों मंे उपद्रव करवा देते हैं। ''खाली दिमाग शैतान का घर'' वाली कहावत बिल्कुल ठीक है। कॉलेजों मंे छात्रों के दैनिक कार्य पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। यदि उनके रोजाना पढ़ने-लिखने की देखभाल हो और उसी पर उनकी वार्षिक उन्नति आश्रित हो तो विद्यार्थी के पास इतना समय ही नहीं रहेगा कि वे बेकार की बातों में अपना समय व्यतीत करें। दूसरी बात यह है कि कक्षाओं में छात्रों पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दिया जाता और न ही उनकी कार्यप्रणाली पर कोई नियंत्रण होता है।

देश में अनुशासन की पुनः स्थापना करने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी शिक्षाप्रणाली व्यवस्था मंे नैतिक और चारित्रिक शिक्षा पर विशेष बल होना चाहिए जिससे छात्र को अपने कर्तव्य और अकर्तव्य का ज्ञान हो जाए। नैतिक शिक्षा का समावेश हाईस्कूल पाठ्यक्रम में सब प्रदेशों में किया जा रहा है, यह बहुत ही सराहनीय प्रयास है। हमारी शिक्षा-प्रणाली में कक्षा एक से लेकर एम.ए. तक के विद्यार्थियों के नैतिक उत्थान की शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी, सिवाय इसके कि वे कबीर और हीम के नीति दोहे पढ़ लें, वह भी परीक्षा में अर्थ लिखने की दृष्टि से। दूसरी बात यह है कि शारीरिक दंड का अधिकार होना चाहिए, क्योंकि बालक तो माता-पिता की तरह गुरू के भय से ही अपने कर्तव्य का पालन

करता है। तीसरी बात यह है कि माता-पिता को बचपन से ही अपने बच्चों के कार्यों पर कड़ी दृष्टि रखनी चाहिए, क्योंकि गुण और दोष संसर्ग से ही उत्पन्न होते हैं।